



AFR

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

(दिनांक 04.02.2020 को निर्णय सुनाया गया)

WP क्रमांक 381/2005

1. श्रीमती किरण देवी अग्रवाल, पत्नी राम भगत अग्रवाल, उम्र लगभग 42 वर्ष, निवासी गुढ़ियारी, रायपुर।
2. श्रीमती मिताली अग्रवाल, पत्नी दीपक अग्रवाल, उम्र लगभग 24 वर्ष, निवासी गुढ़ियारी, रायपुर।
(वर्तमान याचिकाकर्ता 1 और 2 अपने पावर ऑफ अटॉर्नी धारक श्री दीपक अग्रवाल, पुत्र राम भगत अग्रवाल, उम्र लगभग 26 वर्ष, निवासी गुढ़ियारी, रायपुर के माध्यम से प्रस्तुत याचिका दायर कर रहे हैं)
3. श्रीमती कल्पना ढोलकिया, पत्नी राजेंद्र प्रसाद ढोलकिया, उम्र लगभग वर्ष, निवासी खरयार रोड, जिला कालाहांडी (उड़ीसा)
4. श्रीमती. मीना ढोलकिया, पत्नी दिलीप ढोलकिया, उम्र लगभग 50 वर्ष, निवासी खरयार रोड, जिला कालाहांडी (उड़ीसा)।

(वर्तमान याचिकाकर्ता क्रमांक 3 और 4 अपने पावर ऑफ अटॉर्नी धारक श्री राम भगत अग्रवाल, पुत्र हजारी प्रसाद अग्रवाल, उम्र लगभग 50 वर्ष, निवासी गुढ़ियारी, रायपुर के माध्यम से वर्तमान याचिका दायर कर रहे हैं।

... याचिकाकर्ता**बनाम**

1. सचिव, राजस्व विभाग, डीकेएस भवन, रायपुर के माध्यम से छत्तीसगढ़ राज्य।
2. कलेक्टर, रायपुर, जिला रायपुर, छत्तीसगढ़



3. छत्तीसगढ़ हाउसिंग बोर्ड जिसका कार्यालय शंकर नगर, रायपुर (छ.ग.) में है।
कार्यपालक अभियंता, छत्तीसगढ़ हाउसिंग बोर्ड, शंकर नगर, रायपुर (छ.ग.)।
4. कार्यपालक अभियंता, छत्तीसगढ़ हाउसिंग बोर्ड, शंकर नगर, रायपुर (छ.ग.)।

... प्रतिवादी

याचिकाकर्ताओं के लिए : श्री आशीष श्रीवास्तव और श्री अनिमेष वर्मा, अधिवक्ता
राज्य/आर-1 और आर-2 के लिए : श्री आलोक बख्शी, अतिरिक्त महाधिवक्ता।
प्रतिवादी 3 और 4 के लिए : श्री संजय पटेल, अधिवक्ता।

1. इस मामले में शामिल मुद्दा भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1894 (जिसे आगे अधिनियम, 1894 कहा जाएगा) की धारा 48 के तहत किए गए अधिसूचना रद्द करने और उसके बाद 27.01.2005 के विवादित आदेश द्वारा की गई समीक्षा के बारे में है, जिसे चुनौती दी गई है। 1894 के अधिनियम की धारा 48 के तहत आदेशों को वापस लेने और अधिसूचना रद्द करने के ऐसे समीक्षा आदेश की वैधता और औचित्य न्यायनिर्णयन का विषय है।

2. तथ्य, जैसा कि तर्क दिया गया है, यह है कि 12.06.1989 को एमपी हाउसिंग बोर्ड, रायपुर (तब मध्य प्रदेश था) के कार्यपालक अभियंता द्वारा सोनडोंगरी गांव में स्थित 35.034 हेक्टेयर भूमि के अधिग्रहण के लिए एक प्रस्ताव भेजा गया था। इस मामले में विषय भूमि खसरा नंबर 613/128 और 613/163 है, जिसका माप क्रमशः 1.190 हेक्टेयर और 0.118 हेक्टेयर है। अधिग्रहण की विषय वस्तु वाली ऐसी भूमि के हिस्से के संबंध में, 11.1.1990 को मूल मालिक हितेंद्र कोठारी ने याचिकाकर्ता क्रमांक 4 श्रीमती मीना ढोलकिया के पक्ष में खं. क्रमांक 613/163 वाली भूमि की बिक्री



निष्पादित की। इसी तरह 02.02.1990 को याचिकाकर्ता क्रमांक 3 कल्पना ढोलकिया, ख. क्रमांक 613/128। इस प्रकार की खरीद के पश्चात, हाउसिंग बोर्ड ने भूमि अधिग्रहण करने का प्रस्ताव रखा तथा दिनांक 25.04.1990 को आयुक्त रायपुर संभाग ने उक्त खसरा क्रमांक सहित भूमि के बड़े भाग के अधिग्रहण के लिए भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 17(1) को लागू करने की अनुमति प्रदान की। इसके फलस्वरूप दिनांक 25.05.1990 को अधिनियम, 1894 की धारा 4(1) के अन्तर्गत अधिसूचना तथा अधिनियम, 1894 की धारा 6 के अन्तर्गत घोषणा प्रकाशित की गई। उक्त अधिसूचनाएं क्रमशः 08.06.1990 तथा 09.06.1990 को दैनिक समाचार पत्र अमृत संदेश में प्रकाशित की गई। तत्पश्चात, अधिनियम, 1894 की धारा 9(1) एवं (2) के अन्तर्गत विज्ञापन का प्रकाशन किया गया तथा आपत्तियां आमंत्रित की गई। याचिकाकर्ताओं ने 27.8.1990 को अपनी आपत्तियां प्रस्तुत कीं, तथापि, अंततः 05.08.1991 को निर्णय पारित किया गया (अनुलग्नक पी-4)।

3. याचिकाकर्ताओं का तर्क है कि हालांकि 05.08.1991 को अवार्ड पारित किया गया था, लेकिन उनसे ज़मीन का वास्तविक भौतिक कब्ज़ा नहीं लिया गया। यह कहा गया है कि याचिकाकर्ताओं ने ज़मीन पर अधिरचना खड़ी कर दी थी और जब 13.05.1999 को हाउसिंग बोर्ड ने ज़मीन पर बनी चारदीवारी को गिराने की कोशिश की, तो 30.05.1999 को एफआईआर दर्ज की गई और अंततः कब्ज़ा नहीं सौंपा गया। इसके बाद, याचिकाकर्ता 3 और 4 द्वारा भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 48 के तहत एक आवेदन दायर किया गया। इसके बाद, आवेदन पर कुछ नहीं हुआ और इस बीच 01.11.2000 को छत्तीसगढ़ राज्य अस्तित्व में आ गया। इसके बाद 27.12.2000 को अनुलग्नक पी-8 के माध्यम से, तहसीलदार द्वारा राजस्व मामले में एक रिपोर्ट प्रस्तुत की गई। यह दलील दी गई है कि तहसीलदार ने इस तथ्य की पुष्टि की है कि भूमि का भौतिक कब्ज़ा याचिकाकर्ता 3 और 4 के पास है। इसी पृष्ठभूमि में, याचिकाकर्ताओं



द्वारा 05.03.2001 को भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 48 के तहत एक नया आवेदन दायर किया गया था। चूंकि अधिनियम की धारा 48 के तहत बार-बार दायर किए गए आवेदन पर कोई निर्णय नहीं दिया गया था, इसलिए उच्च न्यायालय के समक्ष W.P.No.1089/2001 दायर किया गया और उसके बाद उच्च न्यायालय ने दिनांक 09.4.2003 के आदेश (अनुलग्नक पी-12) के तहत छत्तीसगढ़ राज्य को अधिनियम की धारा 48 के तहत दायर आवेदन पर निर्णय लेने का निर्देश दिया। जो विचाराधीन था।

4. इसके बाद मौके का निरीक्षण किया गया और एसडीओ द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत की गई जिसमें कहा गया कि याचिकाकर्ता 3 और 4 विवादित भूमि पर काबिज हैं। इसके परिणामस्वरूप, 08.07.2004 को कलेक्टर द्वारा अनुलग्नक पी-15 के तहत एक आदेश पारित किया गया जिसके तहत सोनडोंगरी गांव में ख.सं. 613/128 और 613/163 वाली भूमि को भूमि अधिग्रहण कार्यवाही से मुक्त करने का निर्देश दिया गया और भूमि को गैर अधिसूचित करने के लिए मामला भूमि अधिग्रहण अधिकारी को भेजा गया जो अनुलग्नक-15 है। इसके बाद, राज्य सरकार ने 12.07.2004 को राज्यपाल के नाम से अनुलग्नक पी-16 के माध्यम से अधिनियम, 1894 की धारा 48 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए भूमि की अधिसूचना रद्द कर दी और 13.07.2004 को (अनुलग्नक पी-17), राज्य सरकार द्वारा अधिसूचना रद्द कर दी गई और राज्य के राजपत्र में प्रकाशित कर दी गई। इसके बाद, कलेक्टर रायपुर द्वारा "अनापत्ति" दी गई और याचिकाकर्ता 3 और 4 के नामों का राजस्व रिकॉर्ड में म्यूटेशन किया गया। इसके बाद, 19.07.2004 को याचिकाकर्ता 3 और 4 द्वारा याचिकाकर्ता 1 और 2 अर्थात् श्रीमती किरण देवी अग्रवाल और श्रीमती मिताली अग्रवाल के पक्ष में बिक्री विलेख निष्पादित किए गए और खरीद के बाद, खरीदारों के नाम भी राजस्व रिकॉर्ड में म्यूटेशन किए गए।



5. दिनांक 12.01.2005 को परिशिष्ट पी-20 के माध्यम से, कलेक्टर द्वारा पारित दिनांक 08.07.2004 के आदेश के छः माह पश्चात् सी.जी. हाउसिंग बोर्ड द्वारा समीक्षा आवेदन प्रस्तुत किया गया तथा दिनांक 27.01.2005 को परिशिष्ट पी-25 के माध्यम से कलेक्टर द्वारा विवादित आदेश पारित किया गया तथा हाउसिंग बोर्ड की समीक्षा की अनुमति दी गई, जिसके तहत अधिसूचना निरस्त कर दी गई, जिसे इस याचिका में चुनौती दी गई है।
6. याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील श्री आशीष श्रीवास्तव ने दलील दी कि राज्य सरकार ने भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 48 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग इस कारण किया है कि भूमि का भौतिक कब्जा कभी भी हाउसिंग बोर्ड को नहीं सौंपा गया था। उन्होंने आगे दलील दी कि भूमि पर अधिरचना विद्यमान थी और अधिरचना सहित भूमि के मूल्य की सीमा तक मुआवज़ा न लेने के लिए गलत तथ्यों के आधार पर हाउसिंग बोर्ड ने भूमि का कब्जा लेने की कोशिश की, जिस पर आपत्ति की गई। आगे दलील दी गई कि भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 48 के तहत आवेदन को विशेष रूप से इस तथ्य पर विचार करते हुए अनुमति दी गई थी कि भूमि का कब्जा हाउसिंग बोर्ड को नहीं सौंपा गया था। उन्होंने डी-नोटिफिकेशन के आदेश को देखा और प्रस्तुत किया कि कलेक्टर के आदेश के बाद अधिसूचना 12.07.2004 को राज्य सरकार द्वारा राज्यपाल के नाम से की गई थी और 13.07.2004 को डी-नोटिफिकेशन किया गया था और राजपत्र में प्रकाशित किया गया था, भूमि अधिग्रहित करने के लिए, फिर से भूमि अधिग्रहण अधिनियम की पूरी प्रक्रिया का पालन किया जाना चाहिए था। विद्वान वकील प्रस्तुत करेंगे कि अधिनियम की धारा 48 के तहत पारित डी-नोटिफिकेशन के आदेश में यह तथ्य दर्ज है कि पंचनामा भूमि के भौतिक कब्जे के बारे में तैयार किया गया था, जिसमें पाया गया था कि याचिकाकर्ता भूमि पर काबिज हैं और भूमि पर भौतिक रूप से कब्जा नहीं किया गया था। यह भी प्रस्तुत



किया गया है कि छह महीने की अवधि बीत जाने के बाद, हाउसिंग बोर्ड के आवेदन पर कलेक्टर द्वारा समीक्षा आदेश पारित किया गया है जो पूरी तरह से गलत है। यह तर्क दिया गया है कि आदेश की जानकारी की तारीख हाउसिंग बोर्ड को पता थी 9 महीने बीत जाने के बाद समीक्षा आवेदन को अनुमति नहीं दी जा सकती थी।

7. (2009) 2 एससीसी 480 में दर्ज एक मामले का हवाला देते हुए, वकील ने कहा कि एक बार अधिसूचना रद्द हो जाने और प्रकाशन हो जाने के बाद, भूमि अधिग्रहण से बाहर हो जाती है क्योंकि अधिसूचना रद्द करना भी आवश्यक था। इसलिए, अधिसूचना रद्द हो जाने के बाद, भूमि अधिग्रहण अधिनियम का सहारा लिए बिना भूमि वापस नहीं ली जा सकती। यह कहा गया है कि समीक्षा के समय भी, यह दिखाने के लिए कोई नया दस्तावेज रिकॉर्ड में नहीं रखा गया था कि पहले के अवसरों पर, कलेक्टर ने इसी तरह के किसी भी दस्तावेज को ध्यान में रखने में विफल रहा है जिसे अनदेखा किया गया था। यह कहा गया है कि हाउसिंग बोर्ड द्वारा केवल एक प्रतीकात्मक कब्जा लिया गया था जबकि भौतिक कब्जा याचिकाकर्ताओं के पास था। एफआईआर का हवाला देते हुए उन्होंने कहा कि जब हाउसिंग बोर्ड ने अधिरचना को ध्वस्त करने की कोशिश की, तो इसने एफआईआर दर्ज करने का नेतृत्व किया और उक्त घटना से ही पता चलता है कि याचिकाकर्ताओं के पास वास्तव में भूमि का कब्जा था। उन्होंने (2009) 15 एससीसी 705 में दर्ज मामले के कानूनों का हवाला दिया; (1976) 1 एससीसी 700 और (2012) 11 एससीसी 370 और प्रस्तुत करेंगे कि 1894 के अधिनियम की धारा 4 और 6 का उद्देश्य इस मामले में जिस तरह से लागू किया गया था, उससे अलग है। यह कहा गया है कि एक बार जब राज्य सरकार ने 1894 के अधिनियम की धारा 48 के तहत अधिग्रहण से वापस ले लिया और अधिसूचित किया, तो भूमि अधिग्रहण अधिकारी इसकी समीक्षा नहीं कर सकता।



8. हाउसिंग बोर्ड की ओर से पेश हुए विद्वान वकील श्री संजय पटेल ने कहा कि 25.04.1992 को अनुलग्नक आर-4 के अनुसार, भूमि के लिए मुआवजा 05.08.1991 के पुरस्कार (अनुलग्नक पी-4) के अनुसार जमा किया गया था। आगे यह तर्क दिया गया कि 18.05.1992 को याचिकाकर्ताओं ने मुआवजा बढ़ाने के लिए एक आवेदन दिया और आवेदन में स्पष्ट रूप से कहा गया था कि उन्हें एक भूखंड और मुआवजा बढ़ाने की आवश्यकता है, जिसका अर्थ है कि याचिकाकर्ताओं ने पुरस्कार स्वीकार कर लिया है। अनुलग्नक आर-1 का हवाला देते हुए, यह प्रस्तुत किया गया कि भूमि का कब्जा बोर्ड को सौंप दिया गया था। परिणामस्वरूप, भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 16 के अनुसार, मुआवजा चुकाए जाने और कब्जा लिए जाने के बाद, भूमि राज्य के पास चली गई। समान प्रकृति की भूमि पर कब्जा लेने के संदर्भ में, एआईआर 2010 एससी वीकली 707 पर भरोसा किया गया है और प्रस्तुत किया गया है कि भूमि कृषि भूमि होने के कारण, पंचनामा तैयार करके, कब्जा ले लिया गया था।

9. यह भी कहा गया है कि 7 वर्ष बीत जाने के बाद, वर्ष 1999 में अधिनियम की धारा 48 के तहत आवेदन दायर किया गया जबकि पुरस्कार वर्ष 1991 में पारित किया गया था। उन्होंने कहा है कि एक बार जब कार्यवाही कब्जे में लेकर समाप्त हो जाती है, तो भूमि धारा 16 के तहत निहित हो जाती है, परिणामस्वरूप कलेक्टर/भूमि अधिग्रहण अधिकारी के समक्ष होने वाली बाद की कार्यवाही कानूनन गलत होगी क्योंकि भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 48 के तहत प्रयोग करने की शक्ति मौजूद नहीं थी। (2010) 8 एससीसी 467 पर भरोसा किया गया और यह प्रस्तुत किया गया कि भूमि का पंचनामा तैयार होने पर भूमि का निहित होना तय था। इसलिए, चूंकि कलेक्टर ने अधिसूचना रद्द करने का गलत आदेश पारित किया था और वह अधिकार क्षेत्र से बाहर था, इसलिए समीक्षा आदेश द्वारा उसे सही किया गया है। विनय हाउसिंग हाउस बिल्डिंग कोऑपरेटिव सोसाइटी बनाम कर्नाटक राज्य, सिविल अपील संख्या



3600/2011 में सर्वोच्च न्यायालय के हाल के निर्णय पर भरोसा किया गया है और प्रस्तुत किया गया है कि एक बार धारा 16 के तहत निहित होने के बाद, अधिनियम की धारा 48 के आधार पर इसे फिर से नहीं खोला जा सकता है।

10. विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री आलोक बख्शी ने कहा कि इस मामले में याचिकाकर्ताओं ने भूमि अधिग्रहण को चुनौती नहीं दी है। आपत्ति केवल इस बात पर थी कि भूमि का कब्जा नहीं लिया गया था। कहा गया है कि अभिलेखों के अनुसार, यह दर्शाता है कि भूमि का कब्जा हाउसिंग बोर्ड द्वारा लिया गया था। परिणामस्वरूप 1994 एमपीएलजे 303 का हवाला दिया गया और कहा गया कि एक बार अधिग्रहण हो जाने के बाद, किसी भी अधिकारी को वापस जाने का अधिकार नहीं है। उन्होंने कहा कि गलती को सुधार लिया गया है, इसलिए यह समीक्षा करने के अधिकार में है, इसलिए याचिका में कोई दम नहीं है और इसे खारिज किया जाना चाहिए।

11. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को विस्तार से सुना है और अभिलेखों का भी अवलोकन किया है।

12. पूरा विवाद भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 48 के तहत शक्ति के प्रयोग और उसके बाद की समीक्षा के इर्द-गिर्द घूमता है। इस मामले में, शुरू में धारा 48 के तहत शक्ति का प्रयोग कलेक्टर द्वारा 08.07.2004 (अनुलग्नक पी-15) को किया गया था, जिसके तहत हाउसिंग बोर्ड द्वारा अधिग्रहित भूमि को गैर-अधिसूचित किया गया था। बाद में हाउसिंग बोर्ड के आवेदन पर दिनांक 27 जनवरी, 2005 (अनुलग्नक पी-25) के आदेश द्वारा गैर-अधिसूचित करने के उक्त आदेश की समीक्षा की गई और दिनांक 08.07.2004 के आदेश को रद्द कर दिया गया और भूमि को फिर से अधिसूचित किया गया। यह माना गया कि मुकदमे के पहले दौर में जब गैर-अधिसूचित करने का आदेश



पारित किया गया था, तब अधिग्रहण के बाद हाउसिंग बोर्ड द्वारा केवल कागज पर कब्जा प्राप्त किया गया था। बाद के आदेश में यह माना गया कि कलेक्टर द्वारा धारा 48 के तहत शक्ति का गलत तरीके से प्रयोग किया गया था, इसलिए गैर-अधिसूचित करने के आदेश को रद्द कर दिया गया। भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 की धारा 48 जो इस मामले के लिए प्रासंगिक है तथा मामले का सार नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

48. अर्जन का पूरा होना अनिवार्य नहीं है, किन्तु पूरा न होने पर प्रतिकर दिया जाएगा।-- (1) धारा 36 में उपबंधित मामले को छोड़कर, सरकार किसी ऐसी भूमि के अर्जन से पीछे हटने के लिए स्वतंत्र होगी, जिसका कब्जा नहीं लिया गया है।

(2) जब कभी सरकार ऐसे किसी अर्जन से पीछे हटती है, तो कलेक्टर नोटिस या उसके अधीन किसी कार्यवाही के परिणामस्वरूप स्वामी को हुई क्षति के लिए देय प्रतिकर की राशि निर्धारित करेगा, तथा ऐसी राशि हितबद्ध व्यक्ति को, उक्त भूमि से संबंधित इस अधिनियम के अधीन कार्यवाही के अभियोजन में उसके द्वारा उचित रूप से उपगत सभी लागतों सहित, देगा।

(3) इस अधिनियम के भाग III के उपबंध, जहां तक हो सके, इस धारा के अधीन देय प्रतिकर के निर्धारण के लिए लागू होंगे।

13. विनायक हाउस बिल्डिंग कोऑपरेटिव सोसाइटी लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य में सिविल अपील संख्या 3600/2011 में 26 अगस्त 2019 को दिए गए हालिया फैसले में सुप्रीम कोर्ट ने 1894 के अधिनियम में धारा 48 की शुरुआत पर चर्चा करने के लिए



प्रासंगिकता की जांच की थी। पैरा 21 में यह देखा गया कि भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 48 पुराने 1870 के अधिनियम की धारा 54 के अनुरूप है। तत्पर संदर्भ के लिए पुराने अधिनियम की धारा 54 नीचे पुनः प्रस्तुत की गई है:

“54. धारा 44 में दिए गए मामले को छोड़कर, इस अधिनियम में कोई भी बात सरकार को किसी भूमि का अधिग्रहण पूरा करने के लिए बाध्य करने के लिए नहीं ली जाएगी, जब तक कि इसमें पहले से निहित प्रावधानों के तहत कोई पुरस्कार न दिया गया हो या कोई संदर्भ न दिया गया हो। लेकिन जब भी सरकार किसी अधिग्रहण को पूरा करने से इनकार करती है, तो कलेक्टर धारा 4 या धारा 8 के तहत ऐसी भूमि को हुए नुकसान (यदि कोई हो) के लिए देय मुआवजे की राशि निर्धारित करेगा और धारा 5 के तहत पहले से भुगतान नहीं किया गया है, और वह राशि घायल व्यक्ति को देगा।”

14

इसके अतिरिक्त, उपरोक्त निर्णय का प्रासंगिक पैरा 23 नीचे पुनः प्रस्तुत किया गया है:

“23. चयन समिति ने 23 मार्च, 1893 की अपनी दूसरी रिपोर्ट में कुछ स्पष्टीकरण दिए थे, जो इस प्रकार हैं:

“हमने धारा 48 के पहले खंड की शर्तों में बदलाव किया है, जो सरकार को भूमि के प्रस्तावित अधिग्रहण से पीछे हटने की कुछ शक्तियाँ देता है, ताकि यह स्पष्ट हो सके कि यह वापसी कब्जा लेने से पहले किसी भी समय की जा सकती है, लेकिन उसके बाद नहीं। हमारी प्रारंभिक रिपोर्ट में ऐसे उदाहरण दिए गए थे, जिसमें जज के फैसले से यह साबित हुआ कि कलेक्टर ने भूमि के मूल्य के बारे में गंभीर रूप से गुमराह किया था और जिसमें सरकार ने सही



मूल्यांकन प्राप्त होने पर भूमि का अधिग्रहण नहीं किया होता। हमें लगता है कि सरकार। जो साम्राज्य के करों से क्षतिपूर्ति प्रदान करता है, को वर्तमान अधिनियम द्वारा दी गई तुलना में वापसी की अधिक शक्तियाँ होनी चाहिए, लेकिन हमारा मत है कि एक बार कब्जा ले लेने के बाद ऐसी कोई शक्ति नहीं दी जानी चाहिए और प्रत्येक स्थानीय सरकार को, प्रत्येक मामले में, जिसमें संपत्ति के मूल्य के संबंध में कलेक्टर और मालिक के बीच कोई भौतिक अंतर है, न्यायाधीश के निर्णय के बाद तक कब्जा लेने से परहेज करने के लिए कलेक्टरों को कार्यकारी निर्देश देकर खुद को सुरक्षित रखना चाहिए। (जोर दिया गया)

15. यह माना गया कि वर्ष 1894 में भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 48 को अधिनियमित करके परिवर्तन किया गया था, क्योंकि पिछले अधिनियम के तहत, सरकार पुरस्कार दिए जाने या संदर्भ दिए जाने के बाद अधिग्रहण से पीछे नहीं हट सकती थी। चूंकि यह अधिग्रहण की कीमत से अधिक मूल्यवान निकला, इसलिए कठिनाई को दूर करने के लिए, धारा 48 पेश की गई, जिसमें मुख्य रूप से यह देखा गया कि जब भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 16 के तहत भूमि का कब्जा नहीं लिया जाता है, तो सरकार अधिग्रहण से पीछे हट सकती है और इच्छुक व्यक्ति अधिग्रहण की कार्यवाही के परिणामस्वरूप हुई क्षति के लिए मुआवजे का हकदार होगा और कार्यवाही की ऐसी लागतों का भी जो उसके द्वारा उचित रूप से वहन की गई हो। यह भी माना गया कि धारा 48, हालांकि, तब लागू नहीं होगी जब एक बार भूमि एल.ए. अधिनियम की धारा 16 के तहत सरकार में निहित हो जाती है।



16. 1894 के अधिनियम के तहत अधिसूचना रद्द करने की प्रक्रिया की जांच करते समय, सुप्रीम कोर्ट ने मेसर्स विनायक हाउस बिल्डिंग कोऑपरेटिव सोसाइटी लिमिटेड बनाम कर्नाटक राज्य (सुप्रा) के पैरा 38 और 48 में इस प्रकार कहा गया है:

38. हमारा यह मानना है कि सरकार को भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 48 या किसी अन्य कानून के तहत लेआउट बनाने के लिए अधिग्रहित की जा रही किसी भी भूमि को गैर-अधिसूचित या छोड़ने से बचना चाहिए। न्यायालयों को भी अधिग्रहण की जा रही भूमि को गैर-अधिसूचित करने या लेआउट बनाने के लिए अधिग्रहित भूमि के संबंध में योजना की समाप्ति या किसी अन्य आधार पर अधिसूचना को रद्द करने की मांग करने वाले भूमि मालिकों की याचिका पर विचार करते समय बहुत सख्त होना चाहिए। यह ध्यान में रखना होगा कि निजी हित हमेशा सार्वजनिक हित के अधीन होता है।

"48. हमने यह भी देखा है कि राज्य सरकार पिछले 10-15 वर्षों से अधिनियम की धारा 48(1) के तहत भूमि को गैर-अधिसूचित कर रही है और आरोप लगाए गए हैं कि ये आदेश गुप्त उद्देश्यों से पारित किए गए हैं। हमारा मानना है कि राज्य सरकार को इन सभी आदेशों पर पुनर्विचार करना चाहिए और यदि यह पाया जाता है कि ऐसे आदेश कानून का उल्लंघन करके पारित किए गए हैं तो सुधारात्मक कदम उठाने चाहिए। अवैधता को किसी भी कीमत पर रोकना, रोकना और रोकना होगा।

17. इस पृष्ठभूमि और प्रतिपादित सिद्धांतों के अंतर्गत, दो आदेशों

(i) दिनांक 08.7.2004 के अधिसूचना रद्द करने के आदेश और



(iii) दिनांक 27.1.2015 के समीक्षा आदेश की वैधता का मूल्यांकन किया जाता है। मैंने दिनांक 08.07.2004 के अधिसूचना रद्द करने के आदेश की जांच की है, जिसमें यह माना गया था कि हाउसिंग बोर्ड द्वारा केवल कागजी कब्जा प्राप्त किया गया था। यह भी सवाल उठता है कि क्या यह न्यायालय ऐसे तथ्य पर वापस जा सकता है और कब्जा सौंपे जाने या नहीं सौंपे जाने के मुद्दे की जांच कर सकता है या क्या यह जांच करने तक सीमित रहेगा कि भूमि अधिग्रहण अधिकारी को अधिसूचना रद्द करने के लिए अधिनियम 1894 की धारा 48 के तहत पारित आदेश की समीक्षा करने का अधिकार नहीं था। मेरे विचार से, इस मामले में मुद्दा आपस में जुड़ा हुआ है। इसलिए, धारा 48 के तहत पारित आदेश की वैधता की जांच करना आवश्यक है। इसे केवल अधिसूचना रद्द करने के पारित आदेश की समीक्षा तक सीमित नहीं किया जा सकता है।

17. सर्वोच्च न्यायालय ने बेंगलोर विकास प्राधिकरण बनाम मेसर्स विजया लीजिंग लिमिटेड, एआईआर 2013 एस.सी. 2417 में संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत शक्ति निर्धारित करते हुए इस प्रकार माना:

14. कानूनी स्थिति को समझने के लिए हम केवल इस न्यायालय के दो निर्णयों का संदर्भ देना चाहते हैं, जो द्वारकानाथ बनाम आयकर अधिकारी 1965 (2) एससीजे 298: (एआईआर 1966 एससी 81) और गुजरात स्टील ट्यूब्स लिमिटेड और अन्य बनाम गुजरात स्टील ट्यूब्स मजदूर सभा और अन्य, 1980 (2) एससीसी 593: (एआईआर 1980 एससी 1896) में दर्ज किए गए हैं। द्वारकानाथ मामले में, सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित कहा:

“यह अनुच्छेद अस्पष्ट शब्दावली में लिखा गया है और यह स्पष्ट रूप से उच्च न्यायालयों को अन्याय को दूर करने के लिए व्यापक शक्ति प्रदान करता है, चाहे वह



कहीं भी हो। संविधान ने जानबूझकर शक्ति की प्रकृति, उद्देश्य और व्यक्ति या प्राधिकरण जिसके खिलाफ इसका प्रयोग किया जा सकता है, का वर्णन करने में व्यापक भाषा का उपयोग किया है। यह इंग्लैंड में समझे जाने वाले विशेषाधिकार रिट की प्रकृति में रिट जारी कर सकता है;

लेकिन उन रिटों का दायरा भी 'प्रकृति' अभिव्यक्ति के उपयोग से विस्तृत हो जाता है, क्योंकि उक्त अभिव्यक्ति उन रिटों की बराबरी नहीं करती है जो केवल उनसे एक सादृश्य खींच सकती हैं। इसके अलावा, उच्च न्यायालय विशेषाधिकार रिट के अलावा अन्य निर्देश, आदेश या रिट भी जारी कर सकते हैं। यह उच्च न्यायालयों को इस देश की विशिष्ट और जटिल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए राहत को ढालने में सक्षम बनाता है। संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय की शक्ति के दायरे को अंग्रेजी न्यायालयों के विशेषाधिकार रिट जारी करने के अधिकार के बराबर करने का कोई भी प्रयास, इंग्लैंड जैसे तुलनात्मक रूप से छोटे देश में वर्षों से विकसित अनावश्यक प्रक्रियात्मक प्रतिबंधों को भारत जैसे विशाल देश में संघीय ढांचे के तहत काम करने के लिए लागू करना है। इस तरह की व्याख्या अनुच्छेद के उद्देश्य को ही विफल कर देती है।" (जोर दिया गया)

15. इसी तरह गुजरात स्टील ट्यूब्स केस (सुप्रा) में, प्रासंगिक सिद्धांतों को पैराग्राफ 73 और 81 से निकाला जा सकता है।

"73. जबकि अनुच्छेद 226 के तहत उपाय असाधारण है और एंग्लो-सैक्सन विंटेज का है, यह अंग्रेजी प्रक्रियाओं की कार्बन कॉपी नहीं है। अनुच्छेद 226 एक बखशने वाली सर्जरी है, लेकिन जहां अन्याय बढ़ता है, वहां नुकीला काम करता है। जबकि वैकल्पिक उपाय की उपलब्धता जैसी पारंपरिक बाधाएं अदालत को रोकती हैं, और न्यायिक



शक्ति को आमतौर पर वहां नहीं जाना चाहिए जहां अन्य दो शाखाएं कदम रखने से डरती हैं, न्यायिक साहस वहां नहीं डरता जहां स्पष्ट अन्याय सकारात्मक कार्रवाई की भी मांग करता है। अनुच्छेद 226 के व्यापक शब्द उनकी शिकायतों में निम्न संख्या की सेवा के लिए डिज़ाइन किए गए हैं यदि विषय न्यायालय के क्षेत्र से संबंधित है और उपाय न्यायिक प्रक्रिया के लिए उपयुक्त है। अनुच्छेद 226 के बारे में एक देशी रंग है, बिना एंग्लोफिलिक या एंग्लोफोबिक रवैये के। इस न्यायशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो हमें सावधान रहना होगा कि हम अनुच्छेद 226 की सीमा को पार न करें, जैसे कि यह अपील के समान बड़ा हो और हमें उस स्थिति में हस्तक्षेप करने से नहीं चूकना चाहिए, जब कोई गंभीर त्रुटि हो गई हो। इसके अलावा, हम यहां उच्च न्यायालय के फैसले के खिलाफ अपील कर रहे हैं। और अपीलीय शक्ति तब हस्तक्षेप नहीं करती है जब अपील किया गया आदेश सही नहीं होता है, बल्कि केवल तभी हस्तक्षेप करती है जब यह स्पष्ट रूप से गलत होता है। अंतर वास्तविक है, हालांकि ठीक है।

81..... व्यापक रूप से कहा जाए तो कानून के सिद्धांत यह हैं कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र न्यायिक या अर्ध-न्यायिक न्यायाधिकरणों या अर्ध-न्यायिक शक्तियों का प्रयोग करने वाले प्रशासनिक निकायों को वैधता के प्रमुख दायरे में रखने और यह देखने तक सीमित है कि वे अपने वैधानिक अधिकार क्षेत्र से आगे न बढ़ें और जिस कानून के तहत वे काम करते हैं, उसके अनुसार कानून का सही तरीके से प्रशासन करें। जब तक अधिकारियों और अपीलीय अधिकारियों का पदानुक्रम कानून द्वारा बनाए गए अपने दायरे में काम करता है, तब तक जिस तरह से वे ऐसा करते हैं, वह हस्तक्षेप का कोई आधार नहीं हो सकता है।

19. उपरोक्त पाठ के अवलोकन से पता चलता है कि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत शिकायतों के निवारण के लिए व्यापक और विस्तृत शक्तियां प्रदान की गई हैं, यदि विषय



न्यायालय के प्रांत से संबंधित है और उपाय न्यायिक प्रक्रिया के लिए उपयुक्त है। यह उच्च न्यायालय को विशेषाधिकार रिट के अलावा अन्य निर्देश, आदेश या रिट जारी करने और तथ्यों की जांच करने में भी सक्षम बनाता है। यह उच्च न्यायालयों को इस देश की विशिष्ट और जटिल आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए राहत को ढालने में भी सक्षम बनाता है। इसलिए, उपर्युक्त सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए, अधिसूचना रद्द करने के दिनांक 08.07.2004 के आदेश (अनुलग्नक पी-15) की भी जांच की जाती है।

20. घटनाक्रम से पता चलता है कि भूमि अधिग्रहण आदेश 05.08.1991 को पारित किया गया था (अनुलग्नक पी-4)। दस्तावेज अनुलग्नक पी-5 भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 11 के तहत भूमि मालिक द्वारा दिनांक 18.05.1992 के पुरस्कार के बाद दायर किया गया एक आवेदन है। इस आवेदन में मुआवजा बढ़ाने और प्लॉट की मांग की गई थी। इसके बाद का दस्तावेज अनुलग्नक पी-7 मीना ढोलकिया और कल्पना ढोलकिया की ओर से पावर ऑफ अटॉर्नी धारक राम भगत अग्रवाल द्वारा दर्ज कराई गई एफआईआर के रूप में आता है, जिस पर दिनांक 13.05.1999 की तारीख है। इसलिए, रिकॉर्ड पर ऐसा कुछ भी नहीं है जो यह दर्शाता हो कि 7 साल की अवधि तक क्या हुआ और यह पहली बार है कि याचिकाकर्ता ने एफआईआर दर्ज कराई है कि हाउसिंग बोर्ड कब्जा लेने की कोशिश कर रहा है और संपत्ति को नुकसान पहुंचाने की कोशिश कर रहा है। इस तथ्य को नज़रअंदाज़ नहीं किया जा सकता है कि यह 7 साल बाद हुआ और इतने लंबे समय तक कोई आपत्ति नहीं की गई, जबकि पुरस्कार दिए जाने के तुरंत बाद याचिकाकर्ताओं ने मुआवजे की राशि बढ़ाने और प्लॉट की मांग की। याचिकाकर्ताओं की ओर से किया गया यह आचरण प्रासंगिक होगा और प्राकृतिक परिणामों का परिणाम होगा। जबकि दस्तावेज अनुलग्नक आर-1 एक पंचनामा है, जिसका तात्पर्य है कि 80.29 एकड़ की पूरी भूमि का कब्जा जिसमें याचिकाकर्ताओं की भूमि भी शामिल है, हाउसिंग बोर्ड को सौंप दिया गया है, जिस पर तहसीलदार, राजस्व निरीक्षक और पटवारी और हाउसिंग बोर्ड के अधिकारियों के



हस्ताक्षर हैं। उक्त आवेदन दिनांक 24.11.1992 का है। दस्तावेज (अनुलग्नक आर-2) से पता चलता है कि 1992 में हाउसिंग बोर्ड द्वारा 89,95,650/- रुपये का मुआवजा जमा किया गया था।

21. याचिकाकर्ताओं द्वारा धारा 48 के तहत आवेदन वर्ष 1999 में दायर किया गया था (अनुलग्नक पी-9) तथा वर्ष 2001 में पुनः आवेदन दायर किया गया था तथा उसके पश्चात इस न्यायालय द्वारा 09.04.2003 को डब्ल्यू.पी. संख्या 1089/2001 में पारित आदेश के द्वारा भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 48 के तहत कार्यवाही को उसके गुण-दोष के आधार पर तय करने का निर्देश दिया गया था। अधिनियम की धारा 48 के तहत कार्यवाही वर्ष 2003 में शुरू हुई थी। आदेश पत्र में यह तथ्य भी शामिल है कि विचाराधीनता के दौरान भौतिक निरीक्षण किया गया था तथा एस.डी.ओ. के आदेश के अनुसार यह रिपोर्ट दी गई थी कि वास्तविक कब्जा प्राप्त नहीं हुआ है। अतः यह प्रश्न विचारणीय है कि भूमि का वास्तविक कब्जा प्राप्त हुआ था या नहीं, साथ ही यह तथ्य कि क्या पंचनामा (अनुलग्नक आर-1) जो यह बताता है कि सम्पूर्ण भूमि का कब्जा हाउसिंग बोर्ड को सौंप दिया गया था, गलत था?

22. इससे पहले कब्जे के बारे में निर्णय लेने के संबंध में इसी तरह की स्थिति में, सीता राम भंडार सोसाइटी, नई दिल्ली बनाम उपराज्यपाल, एनसीटी सरकार, दिल्ली एआईआर 2010 एससी साप्ताहिक 707 में सर्वोच्च न्यायालय ने इस तथ्य को दोहराया कि एक बार जब कलेक्टर द्वारा कब्जा ले लिया जाता है, तो अधिनियम की धारा 48 के तहत राहत नहीं दी जा सकती क्योंकि वापस लेने की स्वतंत्रता केवल उस भूमि के अधिग्रहण से संबंधित है जिसका कब्जा नहीं लिया गया है। चर्चा के बाद, न्यायालय ने माना कि प्रतीकात्मक और काल्पनिक कब्जा लेना अधिनियम के तहत परिकल्पित नहीं है, लेकिन जिस तरीके से कब्जा लिया जाता है वह आवश्यक रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों पर



निर्भर होना चाहिए। उक्त केस लॉ का अनुसरण करते हुए, न्यायालय ने तमिलनाडु हाउसिंग बोर्ड बनाम विश्वम (डी) एलआर एआईआर 1996 एससी 3377 में देखा कि भूमि के बड़े क्षेत्र पर कब्जा करते समय, एक व्यावहारिक और यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए। न्यायालय ने आगे कहा कि बड़ी संख्या में मालिकों वाली भूमि के बड़े क्षेत्र पर कब्जा करते समय कलेक्टर या राजस्व अधिकारी के लिए प्रत्येक बीघा या बिस्वा में प्रवेश करना और उस पर कब्जा करना असंभव होगा और न्यायालय को एक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाना होगा। न्यायालय ने आगे कहा कि यह भी स्पष्ट है कि कब्जा लेने और लाभार्थी विभाग को सौंपने के तरीकों में से एक पंचनामा दर्ज करना है, जो अपने आप में इस तथ्य का सबूत हो सकता है कि कब्जा ले लिया गया है और भूमि पूरी तरह से सरकार के पास है।

23. वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ताओं ने तर्क दिया कि भूमि का कब्जा उनके पास है और कोटवार के बयान और तहसीलदार के निष्कर्ष (अनुलग्नक पी-8) पर भरोसा किया गया है। कोटवार होरीदास और सरपंच लकन लाल साहू के बयानों का भी हवाला दिया गया है। उक्त बयान वर्ष 1999 में दर्ज किए गए थे जबकि कब्जा लेने वाला पंचनामा वर्ष 1992 का है। तहसीलदार के आदेश (अनुलग्नक पी-8) के अनुसार, विवाद तब शुरू हुआ जब 30.05.1999 को एफआईआर दर्ज की गई थी। हालांकि याचिकाकर्ताओं ने अधिनियम की धारा 11 (अनुलग्नक पी-5) के तहत आवेदन के अनुसार दावा किया है कि घर मौजूद था, लेकिन कागज पर इस तरह के मौखिक प्रस्तुतीकरण को छोड़कर, कोई अतिरिक्त दस्तावेज यानी घर का नक्शा या अधिरचना की तस्वीरों सहित कोई अन्य सबूत रिकॉर्ड पर नहीं रखा गया है जो यह दर्शाता हो कि घर वास्तव में मौजूद थे। याचिकाकर्ताओं के इस आचरण को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता कि अवार्ड होने के बाद, दायर आवेदन को मुआवजा बढ़ाने के साथ-साथ प्लॉट के अनुरोध तक ही सीमित रखा गया। आवेदन (अनुलग्नक पी-5) में लिखा गया था कि मकान पहले से मौजूद था, लेकिन इस कथन के



अलावा, भूमि के डायवर्सन, मकान का नक्शा, बिजली कनेक्शन आदि जैसे कुछ भी रिकॉर्ड पर साबित नहीं किया गया था। इसलिए, इस बात के समर्थन में सबूत के अभाव में कि मकान वास्तव में मौजूद था, केवल बयान को बनाए रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती और ऐसा नहीं माना जा सकता।

24. डी-नोटिफिकेशन के आदेश में यह निष्कर्ष दर्ज किया गया है कि एसडीओ की रिपोर्ट के अनुसार मौके पर कुछ छोटे कमरे मौजूद हैं। हालाँकि, कोई छत मौजूद नहीं है। उक्त कथन भी बाद में सोचे-समझे प्रतीत होते हैं। बिना छत के मकान का अस्तित्व दर्शाता है कि कथन मनगढ़ंत और मनगढ़ंत थे। केवल सरपंच और कोटवार के मौखिक बयानों पर ही भरोसा किया गया, लेकिन प्राथमिक तथ्य यह है कि अधिग्रहण आदेश 1991 में किया गया था और कब्जे के आधार पर डीनोटिफिकेशन का प्रयास 7 साल बाद इस आधार पर शुरू हुआ कि निर्माण वर्ष 1991 में मौजूद था, जिससे याचिकाकर्ताओं का आचरण संदिग्ध हो जाता है। इसके विपरीत, पंचनामा जो वर्ष 1992 का था, दर्शाता है कि कब्जा हाउसिंग बोर्ड को दिया गया था। इस मामले में रिकॉर्ड पर ऐसा कुछ भी नहीं रखा गया है जिससे पता चले कि अधिग्रहण की कार्यवाही के दौरान याचिकाकर्ताओं द्वारा यही आधार लिया गया था कि भूमि पर सुपर स्ट्रक्चर मौजूद है। इसलिए, केवल मौखिक प्रस्तुति के आधार पर, याचिकाकर्ताओं ने यह तथ्य स्थापित करने का प्रयास किया कि भूमि का कब्जा अधिग्रहित नहीं किया गया था क्योंकि सुपर स्ट्रक्चर उसी पर मौजूद था।

25. इसलिए, केवल मौखिक बयान से, याचिकाकर्ता पंचनामा/कब्जे के खिलाफ यह साबित करने में सफल नहीं हो सकता कि भूमि पर कब्जा नहीं लिया गया था। याचिकाकर्ताओं ने आगे तर्क दिया कि एक बार जब राज्य द्वारा राज्यपाल के नाम से गजट डीनोटिफिकेशन (अनुलग्नक पी-7) किया गया था, तो उसे खारिज नहीं किया जा सकता। इसके विपरीत, जैसा कि माना गया है, पंचनामा (अनुलग्नक आर-1) जो दर्शाता है कि भूमि



का कब्जा हाउसिंग बोर्ड को सौंप दिया गया था, याचिकाकर्ता द्वारा दिए गए मौखिक साक्ष्य को पीछे छोड़ देगा। फिर इन परिस्थितियों में, यदि कब्जा याचिकाकर्ताओं के पास नहीं था, तो अधिनियम की धारा 48 को लागू करना ही अमान्य होगा। डीनोटिफिकेशन (अनुलग्नक पी-17) कलेक्टर के दिनांक 08.07.2004 के आदेश पर आधारित है। इसलिए, यदि कलेक्टर का दिनांक 08.07.2004 का आदेश ही अवैध था, तो उसके आधार पर कोई भी बाद की अधिसूचना भी अवैध होगी क्योंकि अवैधता को कायम नहीं रखा जा सकता है।

26. याचिकाकर्ताओं ने राजिंदर सिंह भट्टी बनाम हरियाणा राज्य (2009) 11 एससीसी 480 में भरोसा जताया है, जिसमें कहा गया है कि अधिनियम की धारा 48 के तहत अधिसूचना रद्द करने को भी आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशित किया जाना आवश्यक है, उक्त कानूनी प्रस्ताव विरोधाभासी नहीं है। इसी तरह रामधारी जिंदल मेमोरियल ट्रस्ट बनाम भारत संघ (2012) 11 एससीसी 370 में यह निर्धारित किया गया है कि आवासीय योजना के लिए भूमि अधिग्रहण अधिनियम की धारा 17 (1) और (4) को लागू नहीं किया जा सकता क्योंकि इसमें काफी समय लगता है। यह प्रस्ताव भी विरोधाभासी नहीं है। इसके अलावा देवेनरा सिंह बनाम उत्तर प्रदेश राज्य (2011) 9 एससीसी 551 में भरोसा भी इस मामले का विषय मुद्दा नहीं है।

27. उपर्युक्त निर्देश अलग-अलग मुद्दों पर हैं। इसके बजाय, धारा 48 का विश्लेषण करते हुए, सुप्रीम कोर्ट ने सुलोचना चंद्रकांत गलांडे बनाम पुणे म्युनिसिपल ट्रान्सपोर्ट (2010) 8 एससीसी 467 में अधिनियम 1894 की धारा 16 और 17 के संदर्भ में 'निहित' शब्द की व्याख्या की है। न्यायालय ने पैरा 12, 13, 15 और 16 में इस प्रकार कहा है:



“12. 1976 अधिनियम की धारा 10(3) के प्रावधान भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 (जिसे आगे “1894 अधिनियम” कहा जाएगा) की धारा 16 के अनुरूप हैं। एक बार भूमि पर कब्जा ले लेने के बाद 1894 अधिनियम की धारा 48 या सामान्य खंड अधिनियम, 1897 की धारा 21 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए अधिग्रहण की कार्यवाही वापस नहीं ली जा सकती/त्यागी नहीं जा सकती। [देखें मध्य प्रदेश राज्य बनाम विष्णु प्रसाद शर्मा एआईआर 1966 एससी 1593; हिमाचल प्रदेश के लेफ्टिनेंट गवर्नर बनाम अविनाश शर्मा (1970) 2 एससीसी 149; एआईआर 1970 एससी 1576; प्रताप बनाम राजस्थान राज्य (1996) 3 एससीसी 1 मंदिर श्री सीता रामजी बनाम कलेक्टर (एल.ए.) (2005) 6 एस.सी.सी. 745 : ए.आई.आर. 2005 एस.सी.सी. 3581; बेंगलोर

विकास प्राधिकरण बनाम आर. हनुमैया (2005) 12 एस.सी.सी. 508; तथा हरि राम बनाम हरियाणा राज्य (2010) 3 एस.सी.सी. 621.

13. इस न्यायालय द्वारा “निहित” शब्द के अर्थ पर बार-बार विचार किया गया है। फ्रूट एंड वेजिटेबल मर्चेन्ट्स यूनियन बनाम दिल्ली इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट (एआईआर 1957 एससी 344) में इस न्यायालय ने माना कि “निहित” शब्द का अर्थ उस कानून के संदर्भ के अनुसार भिन्न होता है जिसमें संपत्ति निहित होती है। 1894 अधिनियम की धारा 16 और 17 के तहत मामले पर विचार करते हुए, न्यायालय ने निम्नानुसार माना:

“19.... अर्जित संपत्ति बिना किसी शर्त या सीमा के सरकार की संपत्ति बन जाती है, चाहे वह शीर्षक या कब्जे के रूप में हो। विधानमंडल ने यह स्पष्ट कर दिया है कि संपत्ति का निहित होना किसी सीमित उद्देश्य या सीमित अवधि के लिए नहीं है।”

(जोर दिया गया)



14. "भार" का अर्थ वास्तव में मनुष्य के किसी कार्य या चूक के कारण होने वाला भार है, न कि प्रकृति द्वारा बनाया गया भार। इसका अर्थ है संपत्ति पर भार या प्रभार या भूमि पर दावा या ग्रहणाधिकार। इसका अर्थ है संपत्ति पर कानूनी दायित्व। इस प्रकार, यह शीर्षक पर भार बनाता है जो भूमि के मूल्य को कम करता है। यह बंधक या ट्रस्ट का विलेख या सुखभोग का ग्रहणाधिकार हो सकता है। इस प्रकार, भार, संपत्ति पर भार होना चाहिए। इसे संपत्ति के साथ चलना चाहिए। (देखें कलेक्टर ऑफ बॉम्बे बनाम नुसरवानजी रतनजी मिस्त्री एआईआर 1955 एससी 298; एच.पी. एसईबी बनाम शिव के. शर्मा (2005) 2 एससीसी 164; एआईआर 2005 एससी 954 और एआई चंपदानी इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आधिकारिक परिसमापक (2009) 4 एससीसी 486।

15. एच.पी. राज्य बनाम तरसेम सिंह (2001) 8 एससीसी 104 में, इस न्यायालय ने माना कि 1894 अधिनियम की धारा 16 में प्रयुक्त शब्दावली "सभी बंधनों से मुक्त" पूरी तरह से अयोग्य है और इसमें "सभी अधिकार, शीर्षक और हित जिसमें सुखभोग अधिकार भी शामिल हैं" का विलोपन शामिल होगा, जब शीर्षक राज्य में निहित हो जाता है।

16. इस प्रकार, "बंधों से मुक्त" का अर्थ है बिना किसी शुल्क या बोझ के राज्य में भूमि का निहित होना। इस प्रकार, राज्य के पास पूर्ण शीर्षक/स्वामित्व है इस पर।"

28. वर्तमान मामले में, चूंकि यह देखा गया है कि भूमि का कब्जा वर्ष 1992 में अनुलग्नक आर-1 के अनुसार पंचनामा तैयार करके हाउसिंग बोर्ड को दिया गया था और इस तथ्य के कारण कि यह एक विशाल भूमि है, एक व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाया जाना चाहिए और पक्षों का आचरण प्रासंगिक होगा। कानून की उपरोक्त स्थिति को देखते हुए और याचिकाकर्ताओं के आचरण पर विचार करते हुए क्योंकि याचिकाकर्ताओं द्वारा आपत्ति वर्ष 1999 में की गई थी, यानी 7 साल बाद और यह आधार पेश किया गया था कि भूमि पर



अधिरचना मौजूद थी और यह याचिकाकर्ताओं के कब्जे में थी, इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है, समय बीतने के साथ और याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रस्तुत संपूर्ण मौखिक साक्ष्य इस तथ्य को प्रभावित नहीं कर सकते हैं कि आवास बोर्ड द्वारा पंचनामा के माध्यम से कब्जा लिया गया था, जिसे सरकारी अधिकारियों द्वारा रिकॉर्ड और हस्ताक्षरित किया गया था। यदि याचिकाकर्ता अपने अधिकार के प्रति सजग होते, तो उनसे 7 वर्ष की लंबी अवधि तक निष्क्रिय रहने की अपेक्षा नहीं की जा सकती, जबकि उनकी भूमि वर्ष 1992 में अधिग्रहित की गई थी। इसलिए, अभिलेखों पर उपलब्ध तथ्यों के सामूहिक मूल्यांकन से पता चलता है कि राज्य में निहित भूमि सभी प्रकार के भारों से मुक्त थी और राज्य में निहित भूमि के बाद याचिकाकर्ता अवांछित व्यक्ति बन जाएगा और उसे केवल इसके लिए मुआवजा पाने का अधिकार होगा। परिणामस्वरूप याचिकाकर्ता किसी भी आधार पर भूमि की बहाली का कोई अधिकार नहीं मांग सकते।

29. परिणामस्वरूप, कलेक्टर द्वारा पारित समीक्षा का आदेश जिसमें उन्होंने माना है कि राज्य में निहित भूमि के कारण उन्हें अधिनियम 1894 की धारा 48 के तहत शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार नहीं है, को गलत नहीं ठहराया जा सकता। तदनुसार, याचिका विफल हो जाती है और खारिज की जाती है।

Sd/-
(गौतम भादुड़ी)
न्यायाधीश



अस्वीकरण: हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

